चतुर्थ अध्याय

सातवें दशक के तथा परवर्ती प्रतीक नाटक

चतुर्थ अध्याय

प्रतीक नाटकों के संदर्भ में सातवाँ दशक अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। इस दशक में प्रतीक नाटक चरमसीमा पर पहुँचे गये हुए दिखते हैं। इस दशक में हिंदी प्रतीक-नाटय-लेखन जगत् में अनेक महत्वपूर्ण नाटय-कृतियाँ सामने आयीं, जिनमें प्रतीकों के माध्यम से समसामयिक, सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन की समस्याएँ अपने यथार्थ रुप में प्रस्तुत हुई हैं। इन प्रतीक नाटकों में युगीन समस्याओं को चित्रित करने का प्रयास लक्षित होता है। कथावस्तु का क्रमिक विकास न होकर समाज की समस्याओं, वर्गविशेष की मनोवृत्तियों, व्यक्ति की उलझनों आदि को अपने अनुभवों के आधार पर सांकेतिक रुप से चित्रित करने का प्रयास इन प्रतीक नाटकों में मुख्य रुप से हुआ है। पात्रों का जो चरित्रांकन इन नाटकों में उपलब्ध है, वह नाटककार की विशिष्ट भावनाओं, विचारधाराओं एवं मान्यताओं को प्रतीक रुप में अंकित करता है।

इस दशक में डॉ.लक्ष्मीनारायण लाल ने सर्वाधिक प्रतीक नाटक लिखकर ऐसे नाटकों को ऊँचे स्थान पर पहुँचाया है। 'अन्धा कुआँ' और 'मादा कैक्टस' छठे दशक के नाटक हैं, तो सातवें दशक के तथा परवर्ती दशक के प्रतीक नाटकों में, उनके प्रमुख नाटक हैं, 'सूखा सरोवर', 'नाटक तोता मैना', 'सुंदर रस', 'रक्त कमल', 'दर्पण', 'रातरानी', 'सूर्यमुख', 'कलंकी', 'अब्दुल्ला दीवाना', 'करफ्यू', 'मिस्टर अभिमन्यु', 'यक्ष प्रश्न', 'एक सत्य हरिश्चंद्र', तथा

`नरसिंह कथा` आदि उल्लेखनीय है।

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल ने सन १९६० में `सूखा सरोवर` नामक नाटक लिखा। इस नाटक की प्रतीक योजना लोककथा पर आधारित है। `वैयक्तिक और सामाजिक दोनों स्तरों पर मनुष्य का वर्तमान जीवन सूखा है, क्योंकि उसमें प्रेम का अभाव है। साधारण सी प्रेमकथा के माध्यम से, नाटककार ने प्रतीकों का आश्रय ग्रहण कर, प्रेम के अभाव में देश के जीवन रुपी सरोवर के सूख जाने की प्रतीकात्मक व्यंजना की है।`[१]

सन १९६१ में परितोष गार्गी ने `छलावा` नामक प्रतीक नाटक लिखा। इस नाटक की भूमिका में नाटककार ने स्वयं छलावा की प्रतीकात्मकता को स्पष्ट करते हुए लिखा है `छलावा वास्तव में जंगलों में नहीं, हमारे मन के कोनों - किनारों में छिपा हुआ है। इसका रुप और आकार बाहर से नहीं बल्कि मानव मन की अन्तगत तहों से अवतारित होता है। इसीलिए इसका अपना कोई रुप नहीं और यह हर रुप धारण करने की क्षमता रखता है।`[२] नाटक की कथावस्तु में आद्योपान्त इस छलावा रुपी मानसिक विभ्रमों की सुरंगें बिछी हुई है।

इस नाटक में लालू की प्रेयसी बेला नाटक की केंद्रिय धुरी है। बेला के पिता द्वारा, विवाह में धन न मिल सकने के कारण लालू उसे छोड देता है, परंतु विवाह के दिन बेला उसी के घर में विष खाकर आत्महत्या कर लेती है। फिर मृत बेला `छलावा` बनकर समय-असमय प्रकट होने लगती है। परिवार और पडोस के सभी व्यक्तियों के लिए नाटककार ने लालू की मृत प्रेमिका बेला को ही छलावा बनाकर मनोविभ्रम के रुप में प्रस्तुत किया है। अत: पात्रों के समस्त क्रियाकलाप बेला की आत्महत्या के मनोविकृत रुप में ढल कर प्रतीकात्मक व्यंजना देते हैं। इस नाटक के सभी पात्र किसी न किसी तरह से `छलावा` रुपी मनोविभ्रम के कारण है, या

---

१ डॉ. गिरीश रस्तोगी - हिन्दी नाटक - सिध्दान्त और विवेचन - पृ.क्र.१९७

२ परितोष गार्गी - छलावा - दो शब्द।

शिकार है। डॉ.गणेश दत्त गौड़ ने भी इसे मनोविकृतियों का प्रेरक नाटक [१] कहा है। नाटक की प्रतीकात्मकता शीर्षक तक ही सीमित है, जो पात्रप्रसंगों द्वारा पुष्ट होती है।

सन १९६२ में लक्ष्मीनारायण लाल ने नाटक तोता मैना प्रतीक नाटक लिखा। यह नाटक प्रसिध्द लोकगाथा पर आधारित है। इसमें पुरुष और स्त्री-जाति के मनोविज्ञान एवं उनकी मनोवृत्तियों को प्रतीकात्मक रुप में स्पष्ट किया है। इसमें तोता-मैना का विवाह दिखाया है। दोनों ही एकमात्र अपने आप को श्रेष्ठ मानते हैं। तोता कहता है, पुरुष अच्छा है और स्त्री बुरी। तो मैना कहती है, स्त्री अच्छी है और पुरुष बुरा। तोता-मैना का प्रत्येक कथोपकथन उनकी इसी प्रतीकात्मकता को उद्घोषित करता हुआ चलता है। इस नाटक में आधुनिक स्त्री-पुरुष के संघर्ष के संकेत भी विद्यमान है।

सन १९६२ में लक्ष्मीनारायण लाल ने और एक नाटक लिखा रक्तकमल। यह राष्ट्र निर्माण के तत्वों से भरपूर प्रतीक नाटक है, जिसमें देश की सामाजिक एवं राजनीतिक विकृतियों को उघाड़ते हुए व्यक्ति के बाह्य और आंतरिक यथार्थ को उद्घाटित किया है। इस नाटक का नायक कमल देश में नवजागरण का प्रतीक है। कमल का भतीजा पप्पू, जागरुक भावी पीढ़ी का प्रतीक है। महावीर शोषण व विषमता फैलाने वाले पूँजीपति वर्ग का प्रतीक है, तो डॉ.देसाई जागरुक व बुध्दिवादी नागरिकों का प्रतीक है, जो सत्य को समझते तथा ग्रहण करते हैं। गुरुराम देश में व्याप्त समाजविरोधी तत्व तथा विकृत राजनीति का प्रतीक है। इस प्रकार इस नाटक के सभी पात्र प्रतीकात्मक हैं, और उन्होंने युगीन सत्य अभिव्यक्त किया है।

लक्ष्मीनारायण लाल ने सन १९६२ में ही और एक प्रतीक नाटक लिखा, जिसका नाम है रातरानी। इसमें प्राकृतिक प्रतीकों की योजना है। रातरानी

---

१ डॉ.गणेशदत्त गौड़ - आधुनिक हिन्दी नाटकों का मनोवैज्ञानिक - अध्ययन - पृ.क्र.३३२।

को नारी का प्रतीक मानकर उसे पुरुष जीवन को आनंदित करने वाली बताया है। नाटक का परिवेश एक ओर जयदेव के माध्यम से प्रेस,अर्थात् यांत्रिकता से और ताश, क्लब अर्थात् विकृत आधुनिकता से संबंधित है, दूसरी ओर फूलों का संसार सजाकर अपनी नैसर्गिक भावनाओं की परितुष्टि का प्रयास है।

सन १९६३ में मोहन राकेश ने लहरों के राजहंस नामक नाटक लिखा। यह नाटक नामकरण से लेकर पात्र-परिकल्पना,दृश्य संयोजन,संवाद तथा उद्देश्य तक प्राय: सभी दृष्टियों से एक व्यापक प्रतीकात्मक नाट्य सृष्टि है। वस्तुत: इस नाटक में मोहन राकेश ने,आसक्ति-योग (सुन्दरी) तथा अनासक्तियोग (गौतम) की ओर आकर्षित मानव (नन्द) के अंतर्द्वन्द्व को सजीव रुप प्रदान किया है।नाटक का नाम है लहरों के राजहंस जो लहरों पर तैरते राजहंस की सी अस्थिर दिशा के रुप में नाटक के मुख्य पात्र नंद की अस्थिर मन:स्थिति की ओर सफल प्रतीकात्मक संकेत करता है। राजहंस,नंद और सुंदरीके समानांतर हैं, तथा लहरें उनकी परिस्थितियाँ हैं। समय की परिवर्तनशीलता के साथ परिस्थितियाँ सदैव गतिशील रहती हैं। मनुष्य को परिस्थिति के अनुरुप आचरण करना चाहिए। इस नाटक में ,नंद के मन का कभी नदी तटपर बुध्द के चरणों में जाना और पुन: अपनी रुपगर्विता पत्नी (सुन्दरी) के रंगमहल की ओर लौटना, लहरों पर डोलते राजहंसों की सी अस्थिरता के रुप में सफल प्रतीक ध्वनित हुआ है।

नाटक के मुख्य पात्र हैं - नंद और सुन्दरी, जो क्रमश: पार्थिव - अपार्थिव, प्रवृत्ति-निवृत्ति,राग-विराग,भोग-त्याग,आसक्ति-अनासक्ति के द्वंद्वात्मक झूले में झूलनेवाले मानव तथा एकमात्र प्रवृत्तिमार्गी भौतिक विलासों को ही जीवन सर्वस्व मानने वाली नारी चेतना के प्रतीक हैं। नंद का रुप ऐसे मन का प्रतीक है, जो निरंतर अपने अंतर्द्वन्द्व से पीड़ित है। इस नाटक का श्यामांग नामक चरित्र सर्वाधिक प्रतीकात्मक है। वह परिस्थितियों के दबाव के कारण नन्द की टूटन अंतर्मन की बेचैनी को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। वह नाटक को एक वैचारिक पृष्ठभूमि प्रदान कर तनावग्रस्त नाटकीय संवेदना को तीव्रता से आगे बढाता है।

सन १९६३ में लक्ष्मीनारायण लाल ने ` सुंदर रस ` नाटक लिखा । यह नाटक आदर्शवादी है । इसमें कृत्रिम सौंदर्य की ललक के दुष्परिणाम दिखाकर आन्तरिक सौंदर्य पर बल दिया गया है, जबकि वर्तमान जीवन में अब भी बाहरी सौंदर्य के प्रति आकर्षण विद्यमान है । ` सुंदर रस ` के प्रमुख पात्र हैं -- पंडितराज । ये हृदय, मन व आत्मा की सद्वृत्तियों से जीवन में प्रवाहित होने वाले संयम व सदाचार से प्रसूत भारतीय सौंदर्य के उपासक के रूप में सम्मुख आते हैं । देवी माँ पहले कृत्रिम सौंदर्य गर्वोन्माद की प्रतीक बनकर सम्मुख आती है, किंतु ज्यों ही उसके समक्ष इस विषाक्त कृत्रिमता का दुष्प्रभाव प्रकट होता है, वह अपने आप को पूर्णतया विपरीत दिशा में ढाल लेती है । दोनों शिष्य भी सुंदर रस के विषाक्त प्रभाव की एक कृत्रिम सौंदर्यमयी झलक दिखाकर गुरुदेव की झिड़की खाकर नवयुग की नई पीढ़ी की कृत्रिम सौंदर्योपासना की झलक दिखला जाते हैं । पंडितराज की साली वीना वास्तविक सौंदर्य के रहस्य को पूर्णत: समझने के नाते इस विषाक्त प्रभाव से सर्वथा अनभिज्ञ रहती है । वह आधुनिक युग की नवीन सौंदर्य दृष्टि की परिचायिका है ।

इसके बाद दुष्यन्त कुमार का नाटक ` एक कंठ विषपायी ` (सन १९६३) आता है । धर्मवीर भारती के ` अन्धा युग ` के समान युध्द की विभीषिका और मानव मूल्यों का संकट, इस नाटक का मूल कथ्य है । भूमिका में नाटककार ने स्वयं स्पष्ट किया है , ` यह काव्य-नाटक पौराणिक परिवेश द्वारा जर्जर रूढ़ियों और परंपरा के शव से चिपटे हुए लोगों के संदर्भ में प्रतीकात्मक रूप से आधुनिक पृष्ठभूमि और नये मूल्यों को संकेतित करता है । `[1] यह नाटक दो भिन्न स्तरों पर चलता है, परंपराग्रस्तता और युध्द की विभीषिका, जिसे नाटककार ने प्रतीकात्मकता के नाते आधुनिक परिवेश दे दिया है ।

इस नाटक की कथा ऐसी है -- प्रजापति दक्ष द्वारा किये जाने वाले यज्ञ में सब देवगणों के साथ, भगवान शंकर को आमंत्रित नहीं किया था । अत: दक्षकुमारी

---

१ दुष्यन्त कुमार - एक कंठ विषपायी - आभार कथा (भूमिका)

सती पति के सम्मानार्थ अपने प्राण त्याग देती है। अत: शिव, देवगणों की सहायता से दक्ष-यज्ञ का विध्वंस करता है। यह वर्णन पहले दो दृश्यों में है। तीसरे दृश्य में भगवान शंकर के प्रेयसी वियोग की प्रतिक्रिया वर्णित है और चौथा दृश्य युध्द के औचित्य और अनौचित्य विवेचन से संबध्द है।

`` एक कंठ विषपायी '' की केंद्रिय धुरी है शंकर, जो तीन रुपों में हमारे समक्ष प्रस्तुत हुआ है १) परंपरा के प्रति विद्रोही २) परंपराग्रस्त व्यक्ति और ३) मानवीय संवेदनाओं से युक्त मोहासक्त प्रेमी। वास्तव में इस नाटक का शंकर अंतर्विरोधों से ग्रस्त है, जो आधुनिक मानव के मानसिक अंतर्द्वन्द्व को व्यंजित करने की क्षमता रखता है।

युध्द की विभीषिका को उभारने वाला `सर्वहत' युध्द के भयंकर परिणामों का भोक्ता है, जो `राजलिप्सा तथा युध्द मनोवृत्ति का मारा हुआ.... अनायास उभर कर आधुनिक प्रजा का प्रतीक बन गया है।'[१] सर्वहत शासकों की प्रजा-उपेक्षा तथा प्रजा की दलित स्थिति का प्रतीकात्मक चित्र उपस्थित करते हुए शासक और शासित के स्तर का अंतर भी स्पष्ट करता है। प्रजापति दक्ष भावनाहीन, उध्दत शासक का प्रतीक है। इसे अपने दामाद शंकर तथा आत्मजा सती द्वारा प्रदर्शित थोडा-सा भी स्वतंत्र आचरण सह्य नहीं होता। अत: वह परंपराग्रस्तता का प्रतीक है, जिससे शंकर विद्रोह कर चुके हैं। इंद्र शंकालु शासक के रुप में चित्रित है, तो वरुण और कुबेर स्वार्थी तत्वों के प्रतीक हैं। इसीलिए वे शंकर के विरुध्द युध्द करने के लिए तैयार हैं।

यह नाटक पौराणिक कथा के माध्यम से आधुनिक युग बोध प्रस्तुत करता है। इसमें पुरानी परंपराओं के खण्डन, युध्द की विभीषिका से पीडित मानवता और राजलिप्सा आदि आधुनिक समस्याओं को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त किया गया है।

---

१ दुष्यन्त कुमार - एक कंठ विषपायी - आभार कथा (भूमिका)

कृष्णकिशोर श्रीवास्तव लिखित 'नींव की दरारें' (सन १९६३) नाटक में संयुक्त परिवार की विशृंखलता के बिम्ब दिखाई देते हैं। इस नाटक को नाटककार ने स्वत: प्रतीक नाटक कहा है। इस नाटक की भूमिका में नाटककार ने स्पष्टत: लिखा है 'इस नाटक का आधार एक प्रतीक है। मैंने मध्य वर्ग और उनकी समस्याओं में राष्ट्र तथा राष्ट्र की समस्याओं के दर्शन किये हैं। यही दर्शन इस नाटक के प्राण है।'[१]

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल का 'दर्पण' (सन १९६३) समाज का दर्पण है। मानव की अपने आप से पहचान का नाटक है। मानव-मन में प्रवृत्ति और निवृत्ति में हमेशा द्वंद्व चलता है। इन प्रवृत्तियों की स्थिति को अभिव्यक्ति देकर - दर्पण दिखाकर इस समस्या का समाधान प्रस्तुत करने के लिए नाटक में 'दर्पण' या 'पूर्वी' के चरित्र की सृष्टि की गई है। 'पूर्वी' और 'दर्पण' एक ही है, अर्थात् एक ही व्यक्ति के दो पहलू हैं। एक प्रवृत्ति है और दूसरी निवृत्ति। अन्य पात्रों में, प्रतीकात्मकता की दृष्टि से हरिपदम सहज मानवीय जीवन तथा सुजान नयी पीढी के भावुक युवकों का प्रतिनिधित्व करते हैं। पिताजी रूढिवादी होते हुए भी वास्तविक और यथार्थवादी व्यक्ति हैं।

संतोष नारायण नौटियाल का 'चाय पार्टियाँ' (सन १९६३) नाटक व्यंग्यात्मक है। इसमें वर्तमान सामाजिक जीवन की कृत्रिमता और ढोंग का पर्दाफाश किया है। इसमें आधुनिक कहे जाने वाले समाज के अवसरवादी तथा दुनियादारी में कुशल व्यक्तियों का वास्तविक चित्र अंकित किया गया है। इसमें शीर्षक से लेकर पात्रों तक प्रतीकात्मकता दिखाई देती है। इस नाटक के पात्र समाज के अवसरवादी तथा अपनी स्वार्थ सिध्दि के लिए परस्पर घात-प्रतिघात करने वाले लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं। रमेश उक्त विशेषताओं का प्रतिनिधि नेता है। उसकी पत्नी विमला वर्तमान युगीन संकीर्ण आत्मीयता व स्वार्थ का खेल खेलती हुई, पति से ही प्रशिक्षित दुनियादारी द्वारा, उसी को पराभूत कर देती है। हजारीलाल समाज में व्याप्त भ्रष्टाचारियों का तथा मिस मलकानी वर्तमान संविधान के अनुसार

---

१ कृष्ण किशोर श्रीवास्तव - नींव की दरारें - भूमिका।

नर -नारी समानता की चकाचौंध में बहकर नारी गौरव से हीन, पथभ्रष्ट नवयुवतियों की प्रतिनिधि है। इलमसिंह माई-फतीजावाद तथा रायबहादुर श्यामनारायण मेहरोत्रा जातिवाद के प्रतिनिधि है। मि. बेजल नीर-क्षीर विवेकी, उच्च आदर्शों पर स्थित अधिकारियों के वर्ग के प्रतिनिधि हैं। सतीश आत्मसम्मानी, आदर्शवादी छलछद्म से घृणा करने वाले, महत्वाकांक्षी युवा वर्ग का प्रतीक है।

नाटक के संवाद भी प्रतीकात्मक बने हैं। उदा. विशु और महेश के संवाद आजकल के शिक्षकों तथा छात्रों की मनोवृत्ति का पूर्ण संकेतात्मक चित्र प्रस्तुत करते हैं। वर्तमान शिक्षा-प्रणाली की नि:सारता सिध्द करते हुए विशु कहता है" जो शिक्षा मैंने पायी है, उसने मुझे और कुछ तो बनाया नहीं, घास खोदने लायक भी नहीं छोडा।"[१] यह नाटक संपूर्णत: व्यंग्यात्मक है।

परितोष गार्गी ने सन १९६४ में मोहिनी नाटक लिखा। इस नाटक में प्रत्यक्ष रुप में प्रतीकात्मकता दिखाई नहीं देती तो विविध प्रसंगों में प्रतीकात्मकता है। नाटक के पात्र केवल प्रवृत्ति विशेष को परिचित करनेवाले हैं।

अज्ञेय लिखित उत्तर प्रियदर्शी (सन १९६७) गीति-नाट्य है। इसमें काव्य, मनोविज्ञान और दर्शन का समन्वय दिखाई देता है। इसमें प्रियदर्शी, अशोक और बौध्द भिक्षु के माध्यम से आधुनिक मानव के द्वंद्व को व्यंजित किया है। आधुनिक संवेदना की जटिलता में उलझा हुआ मनुष्य अपने अहंकार के कारण नरक से मुक्ति नहीं पाता, यह बात लेखक ने बताई है। यहाँ सम्राट अशोक इतिहास का पात्र नहीं है, तो आधुनिक मानव का प्रतीक है।

ज्ञानदेव अग्निहोत्री के शुतुरमुर्ग (सन १९६८) में वर्तमान राजनीतिक गतिविधियों पर अच्छा व्यंग्य किया है। आज के सत्ताधारी राजनीतिज्ञों के खोखलेपन का अच्छा चित्र प्रस्तुत किया है। सबसे पहले शीर्षक में प्रतीकात्मकता दिखाई देती है। जैसे शुतुरमुर्ग पक्षी को जब नग्न सत्य चारों ओर से घेर लेते

---

१ संतोष नारायण नौटियाल - चाय पार्टियाँ - पृ.क्र.९५।

है ,और वह भाग नहीं पाता, तब उन सत्यों को अनदेखा करने के लिए आँखों समेत अपनी चोंच रेत में डुबा देता है। पलायन की उस संपूर्ण अनुभूति में वह कल्पना करता है, कि उसे कोई नहीं देख रहा है, उसे कोई नहीं समझ रहा है, उसे कोई नहीं जान रहा है और वह सुरक्षित है।`[1] वैसे ही सत्ताधारी राजनीतिज्ञों ने शुतुरमुर्ग की वृत्ति स्वीकार की है। शुतुरनगरी के राजा का चरित्र तथा आचरण, स्वातंत्र्योत्तर भारतीय राजनीतिज्ञों पर करारा व्यंग्य है। महामंत्री, रक्षा मंत्री, भाषण मंत्री तथा विकास मंत्री सभी शुतुरमुर्गी प्रवृत्ति को प्रदर्शित करते हैं। इसमें विरोधीलाल सिध्दान्तहीन,अवसरवादी, दलबदलू राजनीतिज्ञों का प्रतीक है। मामूलीराम साधारण तथा शुतुरनगरी की शासन-व्यवस्था में जागृत जनता का प्रतीक है। वह अपने क्रियाकलाप द्वारा जनभावनाओं का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें रानी, शुतुरमुर्गी शासनतंत्र के अंग बने ऐसे अयोग्य अधिकारियों के प्रतीक है, जो सर्वथा अयोग्यतम होते हुए भी केवल भाई-भतीजावाद के नाम पर शासन के उच्च पदों पर आसीन हैं। दासी तथा मरता हुआ आदमी-भूखे,पददलित,शोषित, विवश,निरीह,पीड़ित जनता के प्रतीक हैं, जिन्हें शुतुरमुर्गी शासन व्यवस्था में केवल वाचिक सहानुभूति ही मिलती है। इस प्रकार `शुतुरमुर्ग` की प्रतीकात्मकता पर्याप्त स्पष्ट है।

ललित सहगल लिखित नाटक `हत्या एक आकार की` (सन १९६८) में महात्मा गांधी की हत्या का षड्यंत्र करनेवाले हत्यारों के माध्यम से एक अपराधी के मनोविज्ञान तथा मनुष्य के `अहं` का प्रतीकात्मक चित्रण किया है। इसमें अमूर्त भावों का मूर्त प्रतीकीकरण है।

नाटक के पात्र मनुष्य की आन्तरिक वृत्तियोंके प्रतीक हैं। पहला व्यक्ति, (सरकारी वकील) कर्म का प्रतीक है। अपने चरित्र का मूल भाव उसने स्वयं ध्वनित किया है -` मैं कर्म में विश्वास करता हूँ।` दूसरा व्यक्ति (सरकारी गवाह)

---

१ ज्ञानदेव अग्निहोत्री - शुतुरमुर्ग - पृ.क्र.२ तथा २१।

२ ललित सहगल - हत्या एक आकार की - पृ.क्र.१९।

मनुष्य के चिंतन पक्ष या विचार तत्व का प्रतीक है। अपनी योजना की निर्विघ्न परिसमाप्ति ही उसका लक्ष्य है। तीसरा व्यक्ति (न्यायाधीश) षड्यंत्र की सफलता के लिए सभी सुविधाएँ जुटाता हुआ, योजना का प्रबंधक होते हुए, सत्य से आँखें मूँद कर मनुष्य की अविवेकपूर्ण व एकांगी आत्मसंतुष्टि का प्रतीक है। चौथा व्यक्ति (शंकित युवक) नाटक का सर्वाधिक जीवन्त, आत्मविश्वास से सत्यविवेचन द्वारा उभरे निर्भीक एवं निडर व्यक्तित्व संपन्न प्रतीक पात्र है। इस नाटक में मानवीय मन:स्थिति का सशक्त चित्रण है। राष्ट्रीय जीवन की दुर्घटना-गांधी जी की हत्या के आधार पर मनुष्य की आदिम प्रवृत्तियों और मूल्यों के परस्पर संघर्ष के तनाव को प्रतीकात्मक रुप से प्रस्तुत किया है।

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल लिखित `सूर्यमुख (सन १९६८) नाटक पुराण कथा के माध्यम से आधुनिक युगबोध को प्रस्तुत करता है। इस नाटक की प्रतीकात्मकता शीर्षक तक ही सीमित है, जो प्रतीक रुप में यथार्थ की स्वीकृति द्वारा आत्मसाक्षात्कार की स्थिति का द्योतक है। इसमें व्यासपुत्र के माध्यम से नाटककार ने आज के अवसरवादी लेखकों पर तीखा व्यंग्य किया है।[१] वभ्रु में आधुनिक मानव का विद्रोह और साम्ब में संशय बोध प्रमुख है।

जगदीशचंद्र माथुर जी ने सन १९६९ में `पहला राजा` नामक नाटक लिखा। इसमें वैदिक कालीन पात्रों, प्रसंगों और परिस्थितियों के माध्यम से रंगमंच पर समसामयिक समस्याओं का विश्लेषण किया है। तथा वर्तमान सामाजिक जीवन की असंगतियों पर प्रकाश डाला है। नाटक की प्रतीक योजना की ओर, भूमिका में, नाटककार ने स्वयं स्पष्ट संकेत किया है,` वैदिक और पौराणिक साहित्य, पुरातत्व एवं इतिहास, लोकगीत और बोलचाल- इन सभी में मुझे प्रतीकों के उपकरण मिले हैं, उन समस्याओं को प्रकट करने के लिए, जिनसे मैं इस नाटक में जूझता रहा हूँ, वे समस्याएँ सर्वथा आधुनिक हैं, वे उलझनें मेरा भोगा हुआ यथार्थ है। तो यह नाटक

---

१ जयदेव तनेजा - समसामयिक हिंदी नाटकों में चरित्र सृष्टि - पृ.क्र.१५७।

न पौराणिक है, न ऐतिहासिक, न यथार्थवादी । यह तो एक आधुनिक अन्योक्ति का मंचीय रूप है ।[१]

इस नाटक में वर्णित भृगुवंश और आत्रेय वंश की पारस्परिक स्पर्धा वर्तमान दलगत राजनीति और पार्टीबाजी की ओर संकेत करती है । पृथु का निःशस्त्र उत्तेजित भीड में घुसने की घटना भी सांकेतिक है, जो नेहरू की ओर संकेत करती है । इसी प्रकार उर्वी द्वारा भूचण्डिका के आह्वान की संपूर्ण घटना प्रतीकात्मक है । इस नाटक की कथा का केंद्रबिंदु है पृथु । पृथु को नाटककार ने तीन युगान्तकारी परिवर्तनों का प्रतीक माना है ।[२] वे युगान्तकारी परिवर्तन हैं - राजनीतिक, सामाजिक और कृषि-व्यवस्था संबंधी । पुराणों में पृथु की एक दृढ संकल्प ,महान विजेता,ब्राह्मण भक्त, शरणागत वत्सल और दण्डपाणि अवतारी पुरुष के रूप में प्रतिष्ठा हुई है । लेकिन इससे भी अधिक महत्व पूर्ण और प्रामाणिक है - उत्पादन बढानेवाला, पृथ्वी को समतल कर उसकी आर्द्रता का संवर्धन करने वाला, कृषि और सिंचाई और भू-विभाजन का प्रमुख नेता पृथु । इस नाटक के पृथु ने भी दस्युओं के आक्रमण से आर्य आश्रमों की रक्षा की और पृथ्वी को समतल करके खेती की नवीन पध्दति के विधान द्वारा आर्य जीवन और भारत भूमि की काया पलट कर दी । इस प्रकार पृथु अपने कार्यों से युगान्तकारी शासक सिध्द हुआ । अत: पृथु को जवाहरलाल नेहरू का प्रतीक माना गया है ।

उर्वी पुरुषार्थियों की प्रेरणा और धरती का प्रतीक है । वह पृथु को पृथ्वी की संपदा का दोहन करने के लिए प्रेरित करती है । मुनिगण आधुनिक स्वार्थी नेताओं और पूँजीपतियों के प्रतीक हैं, जो वैयक्तिक स्वार्थ के लिए सार्वजनिक हित की उपेक्षा कर देते हैं । सूत-मागध की तुलना नाटककार ने आजकल के प्रचारक और विज्ञापन करनेवालों से की है, किंतु इसके अलावा वे वर्तमान चाटुकारों का भी प्रतिनिधित्व करते हैं , जो चापलूसी के द्वारा उच्चपद प्राप्त कर रहे हैं । समग्रत: प्रस्तुत नाटक में पृथु, कवष और उर्वी के माध्यम से मानव के पुरुषार्थ की कथा

---

१ जगदीश चंद्र माथुर - पहला राजा - भूमिका - पृ.क्र.५६ ।

२ जगदीश चंद्र माथुर - पहला राजा - भूमिका - पृ.क्र.१०१ ।

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

कही गई है, जो असफल होकर भी पराजित नहीं होना चाहता ।

अमृतराय लिखित `चिन्दियों की एक झालर ` (सन १९६९) में आदर्शवादी एकाकी जीवन, नैराश्य और नैतिक पतन का चित्र दिखाई देता है। मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित होकर नाटककार ने `नैतिक पतन और आदर्शवाद की मुठभेड में आदर्शवाद को आत्महत्या करते दिखाकर नये भाव-बोध को एक जीवंत संदर्भ में प्रस्तुत किया है।` [१]

नाटक का शीर्षक `चिन्दियों की एक झालर` प्रतीकात्मक है। इसमें दिखाया है, कि पुरातन उदात्त आदर्शों का, नये युग में मूल्य घट गया है। इसमें क्रांतिकारी `नंदन` और स्वातंत्र्योत्तर पीढी के `मंगल` में पारस्परिक संघर्ष दिखाया है। नंदन की दृष्टि में उसके उत्सर्ग व आदर्शों के स्मृति चित्र (स्वतंत्रता सेनानियों के चित्र) जीवन सर्वस्व हैं। वह उन चित्रों की झालर बनाकर दीवारों पर सुशोभित करता है। परंतु वही आदर्शों के स्मृति चित्र मंगल के लिए रद्दी कागज की चिन्दियों से अधिक मूल्य नहीं रखते। क्रांतिकारियों के जो चित्र नंदन के लिए प्रेरणादायक जीवन शक्ति हैं, वे मंगल के लिए बासी-पुरानी, सडी-गली तस्वीरें लगते हैं। इस प्रकार नाटक का शीर्षक यथार्थवादी युवावर्ग के लिए पुरातन आदर्शों की नितान्त मूल्यहीनता की ओर संकेत करता है। वर्तमान परिस्थितियों में स्वच्छन्द नई पीढी (मंगल) द्वारा पुरातन उदात्त आदर्शों (नंदन) पर अत्यन्त निरादर भरे कटु व्यंग्य करते दिखाकर नाटककार ने दो पीढियों में विचार विभिन्नता के कारण संघर्ष को मूर्त रुप देकर प्रतीक रुप में प्रस्तुत किया है। नंदन पुरातन आदर्शों का प्रतीक है,जिसने अपने जीवन में उत्सर्ग ,त्याग और आदर्श के सिवा कुछ नहीं जाना। मंगल में विद्रोह का स्वर प्रमुख है। मंगल के द्वारा नाटककार ने जीवन की उद्देश्यहीनता, समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार,असफलता आदि के कारण उत्पन्न नैतिक पतन का चित्र उभारा है। नंदन के साथ मंगल के वाग्युध्दात्मक संवाद, शिष्टाचारविहीन स्वच्छंद नई पीढी की मर्यादाहीनता के प्रतीक हैं। दीपा दोनों पीढियों को संबध्द रखने की कोशिश करती हुई

---

१ अमृतराय - चिन्दियों की एक झालर - पृ.क्र.८-९ ।

पुरानी व नई पीढ़ी के संबंध सूत्र की प्रतीकात्मक कड़ी है। नाटककार ने प्रतीक नियोजन द्वारा वर्तमान राजनैतिक और सामाजिक व्यवस्था पर कटु व्यंग्य किया है।

लक्ष्मीनारायण लाल लिखित 'कलंकी' नाटक, (सन १९६९), नवयुग की नवजागृति का सफल प्रतीकात्मक नाटक है। प्रत्येक युग में धर्मतंत्र और राजतंत्र में शासक, नियंता या अधिपति में अपनी अस्तित्व-रक्षा के लिए कलंकी की अनिवार्य कामना उत्पन्न होती है, अर्थात् अपनी अस्तित्व-रक्षा के लिए वह धर्मतंत्र की ओर में कलंकी अवतार रूपी भावी सुख की काल्पनिक आशा दिलाकर, निरंकुश शासन करते हुए, प्रजाका शोषण करता है। इसी परिप्रेक्ष्य में नाटककार ने, इस नाटक में मध्य व वर्तमान युग की अंध परंपराओं पर आधारित धर्मतंत्र और प्रजातंत्र के परिप्रेक्ष्य में छुपे राजतंत्र पर प्रहार किया है।

मोहन राकेश लिखित 'आधे अधूरे' (सन १९६९) में वर्तमान युग के टूटते हुए संबंधों, मध्यवर्गीय परिवार के कलहपूर्ण वातावरण, विघटन, संत्रास, व्यक्ति के आधे-अधूरे व्यक्तित्व आदि का सजीव चित्रण हुआ है। नाटक के सभी पात्र व्यक्तिगत धरातल पर अभावों से असंतुष्ट ,परावलंबी आधुनिक मानव के प्रतीक हैं। पुरुष (पुरुष एक, पुरुष दो, पुरुष तीन, पुरुष चार) आधुनिक मनुष्य के खण्डित व्यक्तित्व का प्रतीक है। सावित्री नौकरी करनेवाली स्त्री का, जो स्वतंत्रता चाहती है, उसका प्रतीक है। बड़ी लड़की बिन्नी, आधुनिक भारतीय नारी के उस असुरक्षित जीवन का प्रतिरूप है, जिसका अस्तित्व पति द्वारा छोड़ दिये जाने पर क्षीण हो जाता है। लड़का अशोक आधुनिक युवा पीढ़ी के आक्रोश का प्रतिनिधित्व करता है।

नाटककार ने इसमें रंग संकेतों और मंच-सज्जा में सांकेतिकता और प्रतीकात्मकता का प्रयोग किया है। घर में पड़ी हुई अस्त-व्यस्त चीजें, जैसे उसमें रहने वाले परिवार के अलग अलग सदस्यों की ओर ही प्रतीकात्मक संकेत है। कमरे में तीन तरफ से झाँकने वाले तीन दरवाजे मानो तीन पुरुषों के प्रतीक हैं, जिनसे होकर सावित्री घर से भाग जाना चाहती है। 'अधटूटा टी सेट', फटी किताबें और टूटी कुर्सियाँ 'चरित्र के अधूरेपन तथा टूटते हुए पारिवारिक संबंधों

के प्रतीक हैं। प्रथम प्रवेश में ही ` स्त्री कई कुछ संभाले बाहर से आती है। कई कुछ में कुछ घर का है, कुछ दफ्तर का, कुछ अपना। `[1] इसके द्वारा घर, दफ्तर और अपने जीवन की उलझनों के बोझ से दबी सावित्री की दयनीय परिस्थिति की ओर मार्मिक संकेत है। अशोक द्वारा ` तस्वीर को चक्-चक् कर बड़े बड़े टुकड़ों में काटना[2] जीवन में बटते हुए मानवीय संबंधों और परंपरित जीवन मूल्यों को व्यंजित करता है।

सुरेंद्र वर्मा लिखित ` द्रौपदी ` में आजके विच्छिन्न व्यक्तित्व वाले मानव का स्वाभाविक रुप से चित्रांकन हुआ है। यह आज के मनुष्य का, सच्चे अर्थों में पूर्ण प्रतीकात्मक चित्र है। महाभारत कालीन द्रोपदी के पाँच पति थे, उसी प्रकार आज का व्यक्ति अपने अंदर पाँच रुप छिपाए, आंतरिक और मानसिक द्वंद्व से ग्रस्त है। नाटककार ने नायक मनमोहन को सामान्य रुप से घरेलू जीवन में स्थित दिखलाते हुए, विशेषत: चार मुखौटे लगाकर उपस्थित किया है। मनमोहन को पाँच रुपों में प्रस्तुत करते हुए भी नाटककार ने शीर्षक रुप में ऐसे पुरुष की पत्नी बनी हुई नारी के जीवन का पूर्णरुप संजोकर रख दिया है।

मनमोहन को यहाँ पाँच नकाबों में दिखाया है। पहला पीला नकाबवाला मनमोहन ` सीनियर असिस्टेण्ट मैनेजर ` है। यह अत्यंत सामान्य मनोयोग से काम करता है। लाल नकाबवाला मनमोहन स्वच्छन्द, अमर्यादित यौन संबंधों का प्रतीक है। काला नकाबवाला उसे बुराइयों की ओर ले जाता है। सात्विक भावों को जागृत नहीं होने देता है। सफेद नकाबवाला मनमोहन का, सभ्य, शिक्षित, सद्वृत्तियोंवाला, उज्ज्वल व सुसंस्कृत रुप है। इस प्रकार मूल और नकाबधारी, पाँचों रुपों के सजीव चित्रण द्वारा नाटककार ने आधुनिक मानव के खण्डित व्यक्तित्व तथा उन रुपों में चलनेवाले आंतरिक द्वंद्व को प्रतीक रुप में प्रस्तुत किया है।

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल ने ` मिस्टर अभिमन्यु ` (सन १९७१) में

---

१ मोहन राकेश - आधे-अधूरे - पृ.क्र.१४ ।

२ मोहन राकेश - आधे-अधूरे - पृ.क्र.६५ ।

राजनीतिक व्यवस्था के अमानवीय चक्रव्यूह में फँसे आधुनिक मानव की विडंबना को उजागर कर दिया है। भारत की वर्तमान समाज-व्यवस्था एक ऐसा चक्रव्यूह है, जिससे बाहर निकल पाना सरल नहीं है। नाटक की कथा भी ऐसे ही आदर्शवादी अधिकारी की कथा है, जो वर्तमान राजनैतिक शोषण और बेईमानी के चक्रव्यूह में फँस कर, उसे तोडने के प्रयत्न में अपनी आत्मिक हत्या कर लेता है। महाभारत का अभिमन्यु सचमुच ही चक्रव्यूह से बाहर निकलना चाहता था। चक्रव्यूह से बाहर निकलने के लिए उसने सच्ची लडाई लडी थी और वह मारा गया था। लेकिन मिस्टर अभिमन्यु बाहर नहीं निकलना चाहता। यही दोनों में फर्क है।

मोहन चोपडा का 'आंधी और घर' (सन १९७१) पुरातनता और विद्रोही नूतनता के बीच सामंजस्य का प्रतीक है। इसमें बाह्य और आंतरिक संघर्ष दिखाया है। आँधी बाह्य संघर्ष का प्रतीक है। यह आँधी परिवर्तनशील नये विचारों की चुनौती बनकर आती है। इसमें युगों से घिसता चला आ रहा एक पुराना घर है। इसमें स्वच्छ हवा के लिए न झरोखा है न खिडकी। दरवाजे और फर्नीचर पर पुरातनता की दीमक लग गई है। इसकी दीवारें खोखली हो चुकी हैं। आँधी के थपेडों से उसका चूना-प्लास्टर टूटने लगा है। इस घर के लोग भी पुरातन पंथी हैं। वे अंधविश्वासी हैं। पूर्वजों की मूर्तियों की पूजा करते रहते हैं। अत: घर की युवा संतानें इसे कैदखाना समझकर घर से भाग निकलने के लिए छटपटाती हैं और आँधी आने पर इसके विध्वंस की कामना करती हैं।

लक्ष्मीनारायण लाल ने 'कर्फ्यू' (सन १९७२) में, सांकेतिक शैली में बाहर के कर्फ्यू को मनुष्य के भीतरी कर्फ्यू से जोडा है। सभ्यता की सीमाओं के कारण मनुष्य कुछ नहीं कर सकता है। वह अपनी आंतरिक वृत्तियों का दमन करता है। इस तथाकथित कर्फ्यू को डॉ.लाल ने तोडने का प्रयास किया है। सभ्यता और संस्कृति का प्रतिबंध उन्हें कर्फ्यू की तरह लगता है।

बृजमोहन शाह का `त्रिशंकु` पौराणिक प्रतीक के माध्यम से युग की वास्तविक समस्याओं को उद्घाटित करता है। इसमें एक ऐसा युवक है, जो विश्वविद्यालय और बेरोजगारी के मध्य त्रिशंकु के समान लटका हुआ है। पोस्ट - ग्रेज्युएट डिग्री धारी युवक बहुत कुछ करना चाहकर भी स्थायित्व के अभाव में कुछ नहीं कर पाता और उसे अपनी महत्वाकांक्षाओं के बदले निराशा ही हाथ लगती है। अत: यह नाटक आज के उस प्रत्येक युवक का नाटक है, जो शिक्षित और बेकार होने के कारण त्रिशंकु की तरह लटका हुआ है।

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल ने `अब्दुल्ला दीवाना` (सन १९७३) में वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक एवं न्याय व्यवस्था पर तीव्र व्यंग्य करते हुए उसके दिवालियेपन को खुले रूप से उजागर किया है। स्वतंत्रता के पच्चीस वर्षों में अब्दुल्ला की `नैतिक` हत्या हो गयी है। नैतिक मूल्यों के प्रतीक `अब्दुल्ला` की हत्या किसने की ? यह प्रश्न नाटक का मूल कथ्य है और उसके हत्यारे की खोज में इस नाटक की कथायात्रा प्रारंभ होती है। अब्दुल्ला नाटक का अमूर्त चरित्र है, जिसके चारों ओर नाटक का घटना क्रम चलता है।

`सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक` नाटक सुरेन्द्र वर्मा ने लिखा है। नाटक का परिवेश सभी दृष्टियों से पौराणिक है। पात्र - परिकल्पना, भाषा, वस्त्र तथा मंचसज्जा सभी पौराणिक है, परंतु नाटककार ने यहाँ यौन संबंधों को लेकर स्त्री-पुरुष के संबंधों का विश्लेषण किया है। नाटक के प्रमुख पात्र शीलवती तथा ओक्काक विशेष व्यक्ति न होकर मात्र स्त्री और पुरुष हैं।

मुद्राराक्षस का `मरजीवा` (सन १९७६) आज की राजनीति और समाज व्यवस्था पर आक्रामक आक्षेप और कटु व्यंग्य करने में समर्थ है। नाटक का बेरोजगार नायक विवश होकर अपनी पत्नी और बच्चे के साथ आत्महत्या की योजना बनाता है। असफल योजना में उलझकर उसकी पत्नी और बच्चा दोनों मर जाते हैं और नायक बच जाता है। बाद में वह अपने आप को पुलिस के हवाले कर देता है। तब

स्थानीय नेता के दुराग्रह पर पुलिस उसका उपयोग राजनीतिक स्टंट में मृत्यु दंड के रूप में न कर आत्मदाह के रूप में करना चाहती है। उस नायक का आक्रोश भरा स्वर स्पष्टतः उभर कर तीखी व्यंजना देता है।

सुरेंद्र वर्मा का 'आठवाँ सर्ग' (सन १९७७) राज्याश्रय की समस्या तथा व्यवस्था द्वारा कलाकार के अभिलाषित स्वातंत्र्य पर अंकुश के प्रश्न को उठाता है। कालिदास की स्वकुंठा की पीड़ा उसकी ही नहीं, आज के हर रचनाकार व्यक्ति की पीड़ा है, जिसे व्यवस्था के कारण दम तोड़ना पड़ता है। इसके माध्यम से नाटककार ने साहित्यकारों के पीढ़ी-संघर्ष को भी वाणी प्रदान की है। तथा तत्कालीन परिस्थितियों में लेखकीय स्वकुंठा और राज्याश्रय से संबंधित समस्याओं पर एक बड़ा प्रश्नचिह्न लगाया है।

-- निष्कर्ष --

इस दशक में प्रतीक नाटक चरमसीमा पर पहुँच गये हुए दिखते हैं। अनेक नाटकों में प्रतीकों के माध्यम से विविध समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है। इनमें युगीन समस्याएँ चित्रित की गई हैं। शिल्प की दृष्टि से ये नाटक विकसित हो गये हैं। इनके नाटकों के प्रमुख रचनाकार हैं - लक्ष्मीनारायण लाल, मोहन राकेश, परितोष गार्गी, दुष्यान्त कुमार आदि।

••